[2020] 6 एस. सी. आर. 1132

इलनगोवन

बनाम
तमिलनाडु राज्य द्वारा पुलिस निरीक्षक

(आपराधिक अपील सं. 1285/2010) 02 सितंबर, 2020

[एन.वी. रमना, एस. अब्दुल नजीर और सूर्य कांत, न्यायमूर्तिगण]

दंड संहिता, 1860:

धारा 304 (भाग द्वितीय) और 324-अभियोजन अन्तर्गत धारा 302 और 324-चार आरोपियों के खिलाफ-एक व्यक्ति की मौत के लिए और दो को चोट पहुंचाने के लिए-विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी-अभियुक्त को अन्तर्गत धारा 302 और 324 में दोषी ठहराया, अन्य अभियुक्तों को बरी करते हुए-उच्च न्यायालय, ने अपील में अपीलार्थी-अभियुक्त की दोषसिद्धि अन्तर्गत धारा 302 से अंतर्गत धारा 304 (भाग द्वितीय) में इस आधार पर संशोधित किया कि मामला धारा 300 भा.दं. सं. के अपवाद 4 के तहत पाया गया- विचारण न्यायालय के शेष फैसले को बरकरार रखा गया था-उच्चतम न्यायालय में अपील-अभिनिर्धारण: अपीलार्थी-अभियुक्त के खिलाफ न्यायालय में दी गई गवाही शिकायत और पुलिस के समक्ष दिये गये बयानों के अनुरूप है। -अपीलार्थी-अभियुक्त उच्च न्यायालय के निष्कर्षों में किसी भी दुर्बलता को इंगित करने में सक्षम नहीं है-आक्षेपित आदेश को बरकरार रखा जाता है।

आपराधिक परीक्षण:

साम्यता का नियम-बरी किए गए सह-अभियुक्तों के साथ साम्यता की मांग करने वाले दोषसिद्ध अभियुक्त-अभिनिर्धारण कानून का ऐसा कोई सिद्धांत नहीं है जिसमें सह-अभियुक्तों को बरी करने के कारण किसी अभियुक्त को स्वत: बरी करने की आवश्यकता हो।

साक्ष्य:

संबंधित गवाह-साक्षात्मक मूल्य-अभिनिर्धारण: किसी संबंधित या इच्छुक गवाह की गवाही को विचारण में लिया जा सकता है, ऐसे मामलों में न्यायालय पर अतिरिक्त बोझ के साथ इस तरह के सबूतों की सावधानीपूर्वक जांच की जा सकती है।

सिद्धांत:

'एक में झूठे, सर्वव्यापी में झूठे'-प्रकृति और प्रयोज्यता।

अपील खारिज करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारण: 1. किसी संबंधित या इच्छुक गवाह की गवाही को विचारण में लिया जा सकता है, ऐसे मामलों में न्यायालय पर अतिरिक्त बोझ के साथ इस तरह के सबूतों की सावधानीपूर्वक जांच की जा सकती है। इस प्रकार, केवल यह दलील कि मामले में गवाहों की गवाही को नजरअंदाज किया जाना चाहिए क्योंकि वे संबंधित थे, न्यायालय के ध्यान में अविश्वास करने के किसी भी कारण को लाए बिना, का समर्थन नहीं किया जा सकता है। [पैरा 7] [1136-सी-डी)
सुधाकर बनाम राज्य (2018) 5 एससीसी 435: [2018] 4 एससीआर 612-पर भरोसा किया।

2. कानून का ऐसा कोई सिद्धांत नहीं है, जिसमें सह-अभियुक्तों को बरी करने के कारण किसी अभियुक्त को स्वत: बरी करने की आवश्यकता हो। अपीलार्थी-अभियुक्त के खिलाफ साक्षय की प्रकृति और गुणवत्ता उसके सह-अभियुक्त के विरूद्ध प्रस्तुत साक्षय से अलग थी। विचारण न्यायालय ने उल्लेख किया कि अन्य सह-अभियुक्त वर्तमान अपीलार्थी के चाची (आरोपी सं. 2), मां (आरोपी सं. 3) और दादा (आरोपी सं. 4) थे। न्यायालय ने कहा कि आरोपी सं. 4, 70 साल का था, और सीधा खड़ा भी नहीं हो सकता था, किसी गवाह को कोई चोट पहुंचाने की तो दूर की बात है। इसके अलावा, आरोपी सं. 2 और 3, के लिए जिम्मेदार कार्यों के संबंध में, विचारण न्यायालय ने माना कि वे अतिशयोक्ति और विचारोपरान्त के लगते हैं, क्योंकि उन्हें शिकायत में भी शामिल नहीं किया गया था। न्यायालय ने अंतत: यह माना कि इस तथ्य के अलावा कि आरोपी सं. 2 से 4 घटना स्थल पर मौजूद थे, चक्षुदर्शी साक्षियों की गवाही में ऐसा कोई ठोस सबूत नहीं आया जो यह संकेत दे कि इनके द्वारा गवाहों को चोटें पहुंचायी गई। जब अपीलार्थी की बात आती है, तो उसके खिलाफ सुसंगत साक्षय हैं, न्यायालय में दी गई गवाही शिकायत और पुलिस के समक्ष दिये गये बयानों के अनुरूप है। अपीलार्थी मुख्य आरोपी है, जिसके बारे में कहा जाता है कि उसने शिकायतकर्ता पर हमला किया और उसे चोटें पहुंचायी साथ-ही-साथ मृतक के सिर पर लोहे की रॉड से वार किया, जिससे उसकी मौत हो गई। अपीलार्थी के विरूद्ध अभियोग आरोप पत्र, शिकायतकर्ता की आघात प्रमाण पत्र तथा मृतक की पोस्टमार्टम आख्या के अनुरूप है। [पैरा 8,9 और 10] [1137-ए-ई]
यानोब शेख बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (2013) 6 एससीसी428: [2012] 13 एससीआर 1150-पर भरोसा किया।

3. यह स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि एक बार जब गवाहों को सह-अभियुक्तों के संबंध में अविश्वास किया गया था, तो वर्तमान अभियुक्त के संबंध में उनकी गवाही को भी खारिज किया जाना चाहिए। भारतीय न्यायालय हमेशा कानूनी सिद्धान्त "एक में झूठे, सर्वव्यापी में झूठे" को लागू करने के लिए अनिच्छुक रहे हैं । यह सिद्धान्त कानूनी नियम का दर्जा हासिल नहीं कर पाई है। यह केवल सावधानी का नियम है। इस सिद्धांत में केवल साक्षय के वजन का प्रश्न निहित है जिसे न्यायालय किसी दी गई परिस्थितियों में लागू कर सकती है लेकिन यह वह नहीं है जिसे "साक्षय का अनिवार्य नियम" कहा जा सकता है। विचारण न्यायालय ने सह-अभियुक्तों के संबंध में गवाहों की गवाही पर अविश्वास करने का विशिष्ट कारण दिया है और उन्हें संदेह का लाभ दिया है, जबकि अपीलार्थी की दोषसिद्धि उसके विरूद्ध सबूतों के आधार पर की गई है। विचारण न्यायालय के दृष्टिकोण में कोई दुर्बलता नहीं है। [पैरा 11-12] [1137-एफ; 1138-बीसी; ईजी]
निसार अली बनाम उत्तर प्रदेश राज्य आयु 1957 एससी 366: [1957] एससीआर 657; रोहतास बनाम हरियाणा राज्य (2019) 10 एससीसी 554-पर भरोसा किया।

4. उच्च न्यायालय ने, आक्षेपित निर्णय में, अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों को ध्यान में रखा और पूरे सबूतों पर विचार किया, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के उद्देश्य से कि यह एक स्वतंत्र लड़ाई थी क्योंकि अपीलार्थी को भी चोटें लगी थीं और यहां तक कि एक शिकायत करने का प्रयास भी किया था। उपरोक्त के आधार पर, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि और अधिरोपित दंड को संशोधित किया । अपीलार्थी उच्च न्यायालय के निष्कर्षों में किसी भी दुर्बलता को इंगित नहीं कर पाया है। इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है। [पैरा 13-14] [1138-जी-एच; 1139-ए]

संदर्भित न्याय निर्णयन [2018] 4 एससीआर 612 के पैरा 7 पर भरोसा किया [2012] 13 एससीआर 1150 के पैरा 8 पर भरोसा किया [1957] एससीआर 657 के पैरा 11 पर भरोसा किया (2019) 10 एससीसी 554 के पैरा 11 पर भरोसा जताया।

इलनगोवन बनाम तमिलनाडु राज्य द्वारा पुलिस निरीक्षक

दाण्डिक अपीलीय न्यायाधिकरण: आपराधिक अपील सं. 1285/2010.

दाण्डिक अपील सं. 1822/2003 में मदुरै पीठ, मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश दिनांकित 06.01.2010.

जयंत मुथुराज, एएजी, (तमिलनाडु), केवी विजयाकुमार, एंड. योगेश कन्ना, सलाहकार, उपस्थित पक्षकारों के लिए।

न्यायालय का निर्णय द्वारा दिया गया

एन.वी. रमना, जे.

1. वर्तमान अपील मद्रास उच्च न्यायालय की मदुरै बेंच द्वारा पारित निर्णय दिनांकित 06.01.2010 के खिलाफ निर्देशित है, जिसमें अपीलार्थी-अभियुक्त की अपील को आंशिक रूप से अनुमति दी गई और धारा 302, भा.दं. सं. के तहत उसकी सजा को धारा 304 भाग द्वितीय, भा.दं. सं. के तहत संशोधित किया गया और सजा को जुर्माने के साथ 5 साल के सश्रम कारावास में घटा दिया गया था। धारा 324, भा.दं. सं. के तहत अपीलार्थी पर लगाई गई सजा की पुष्टि उच्च न्यायालय ने की थी और दोनों सजा को समवर्ती चलाने के लिएआदेश दिया गया था।

2. अपील के निपटान के लिए आवश्यक तथ्य इस प्रकार हैं: शिकायतकर्ता के भाई का कथित रूप से आरोपी सं. 4 की बेटी के साथ अवैध संबंध था, जिसके परिणामस्वरूप दोनों परिवारों के बीच दुश्मनी हो गई। 26.01.2002 को, अभियुक्तगण कथित रूप से शिकायतकर्ता के घर के सामने आए और दोनों समूहों के बीच लड़ाई हुई। वर्तमान अपीलार्थी ने शिकायतकर्ता पर लोहे की रॉड से हमला किया, जबकि अन्य 3 आरोपियों ने कथित तौर पर परिवार के अन्य सदस्यों पर लाठी के साथ हमला किया। शोर सुनकर मृतक ने हस्तक्षेप करने का प्रयास किया, और वर्तमान अपीलार्थी द्वारा लोहे की रॉड से सिर पर हमला किया गया, जिसके परिणामस्वरूप अंतत: उसकी मृत्यु हो गई।

3. विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को धारा 324 और 302, भा.दं. सं. के तहत दोषी ठहराया और उसे क्रमश: 2 साल सश्रम कारावास और आजीवन कारावास की सजा सुनाई। अन्य आरोपियों को बरी कर दिया गया क्योंकि उनके खिलाफ आरोप संदेह से परे साबित नहीं हुए। अपील पर, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, उच्च न्यायालय ने धारा 302, भा.दं. सं. के तहत सजा को संशोधित किया, और धारा 304 भाग 2, भा.दं. सं. के तहत सजा सुनाई, इस आधार पर कि अपीलार्थी का मामला धारा 300 भा.दं. सं. के अपवाद 4 के तहत पाया गया, यानी, दोनों पक्षों के बीच एक स्वतंत्र लड़ाई थी।

4. आज अपीलार्थी-अभियुक्त की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और तमिलनाडु राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को विस्तार से सुना गया।

5. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि उच्च न्यायालय ने केवल मृतक के रिश्तेदारों की गवाही पर भरोसा करके अपीलार्थी को दोषी ठहराने में गलती की। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि अपीलार्थी को संदेह का लाभ देकर बरी कर दिया जाना चाहिए था, खासकर जब विचारण न्यायालय ने अभियोजन पक्ष के मामले पर अविश्वास किया और सह-अभियुक्तों को बरी कर दिया।

6. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि उच्च न्यायालय ने रिकॉर्ड पर सभी साक्षयों पर विचार किया है और एक सुविचारित निर्णय दिया है जो इस न्यायालय द्वारा किसी भी हस्तक्षेप के योग्य नहीं है।

7. संबंधित गवाहों की गवाही के संबंध में अपीलार्थी के अधिवक्ता की पहली प्रस्तुति के संबंध में, यह एक स्थापित कानून है कि किसी संबंधित या इच्छुक गवाह की गवाही को विचारण में लिया जा सकता है, ऐसे मामलों में न्यायालय पर अतिरिक्त बोझ के साथ इस तरह के सबूतों की सावधानीपूर्वक जांच की जा सकती है। [देखें सुधाकर बनाम राज्य, (2018) 5 एससीसी 435]। इस प्रकार, अपीलार्थी के अधिवक्ता की केवल यह दलील, कि मामले में गवाहों की गवाही को नजरअंदाज किया जाना चाहिए क्योंकि वे संबंधित थे, न्यायालय के ध्यान में अविश्वास करने के किसी भी कारण को लाए बिना, का समर्थन नहीं किया जा सकता है।

8. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने आगे कहा कि उसके सह-अभियुक्तों को दिए गए संदेह का लाभ उसे भी दिया जाना चाहिए था। उनके अनुसार, एक बार सह-अभियुक्त को बरी कर दिया गया था, अपीलार्थी को भी बरी कर दिया जाना चाहिए था। हालांकि, कानून का ऐसा कोई सिद्धांत नहीं है, जिसमें सह-अभियुक्त के बरी होने के कारण किसी अभियुक्त को स्वतः बरी करने की आवश्यकता हो। यही कानून की एक व्यवस्थित स्थिति है, जिसे इस न्यायालय ने कई निर्णयों में दोहराया है, जिसमें यानोब शेख बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2013) 6 एससीसी 428, का मामला भी शामिल है, जिसमें यह अभिनिर्धारण किया गया था -

"24. ... जहां अभियोजन पक्ष ठोस, विश्वसनीय और भरोसेमंद सबूतों द्वारा अभियुक्त का अपराध स्थापित करने में सक्षम है, केवल एक आरोपी के बरी होने से दूसरा आरोपी स्वतः ही बरी नहीं हो जाएगा। यह केवल वहीं है जहां अभियोजन का पूरा मामला दुर्बलताओं, विसंगतियों से ग्रस्त है और जहां अभियोजन पक्ष अपना मामला स्थापित करने में सक्षम नहीं है, सह-अभियुक्तों को बरी करना दूसरे के मामले को तय करने के लिए कुछ प्रासंगिकता का होगा।"

(जोर दिया गया)

इलनगोवन बनाम तमिलनाडु राज्य द्वारा पुलिस निरीक्षक [एन.वी. रमना, जे.]

9. इसलिए सवाल यह है कि वर्तमान अपीलार्थी के खिलाफ सबूतों की तुलना में सह-अभियुक्तों के खिलाफ सबूतों की प्रकृति क्या थी। विचारण न्यायालय के निर्णय के अवलोकन से यह विदित होता है कि अपीलार्थी-अभियुक्त के खिलाफ सबूतों की प्रकृति और गुणवत्ता उस से अलग थी जो उसके सह-अभियुक्त के खिलाफ प्रस्तुत किया गया था। विचारण न्यायालय ने उल्लेख किया कि अन्य सह-अभियुक्त वर्तमान अपीलार्थी के चाची (आरोपी सं. 2), मां (आरोपी सं. 3) और दादा (आरोपी सं. 4) थे। न्यायालय ने कहा कि आरोपी सं. 4, 70 साल का था, और सीधा खड़ा भी नहीं हो सकता था, किसी गवाह को कोई चोट पहुंचाने की तो दूर की बात है। इसके अलावा, आरोपी सं. 2 और 3, के लिए जिम्मेदार कार्यों के संबंध में, विचारण न्यायालय ने माना कि वे अतिशयोक्ति और विचारोपरान्त के लगते हैं, क्योंकि उन्हें शिकायत में भी शामिल नहीं किया गया था। न्यायालय ने अंततः यह माना कि इस तथ्य के अलावा किआरोपी सं. 2 से 4 घटना स्थल पर मौजूद थे, चक्षुदर्शी साक्षयों की गवाही में ऐसा कोई ठोस सबूत नहीं आया जो यह संकेत दे कि इनके द्वारा गवाहों को चोटें पहुंचायी गई।

10. दूसरी ओर, जब अपीलार्थी की बात आती है, तो उसके खिलाफ सुसंगत साक्षय हैं, न्यायालय में दी गई गवाही शिकायत और पुलिस के समक्ष दिये गये बयानों के अनुरूप है। अपीलार्थी मुख्य आरोपी है, जिसके बारे में कहा जाता है कि उसने शिकायतकर्ता पर हमला किया और उसे चोटें पहुंचायी साथ-ही-साथ मृतक के सिर पर लोहे की रॉड से वार किया, जिससे उसकी मौत हो गई। अपीलार्थी के विरूद्ध अभियोग आरोप पत्र, शिकायतकर्ता की आघात प्रमाण पत्र तथा मृतक की पोस्टमार्टम आख्या के अनुरूप है। यह उपरोक्त कारणों से कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी और सह-अभियुक्त के खिलाफ अभियोजन पक्ष के मामले के बीच अंतर किया और हमें इसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं दिखता है।

11. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने अंतिम रूप से तर्क दिया कि एक बार जब गवाहों को सह-अभियुक्तों के संबंध में अविश्वास किया गया था, तो वर्तमान अभियुक्त के संबंध में उनकी गवाही को भी खारिज किया जाना चाहिए। अधिवक्ता ने , वास्तव में, कानूनी सिद्धान्त "एक में झूठे, सर्वव्यापी में झूठे" पर भरोसा करते हैं, जिसे लागू करने के लिए भारतीय न्यायालय हमेशा अनिच्छुक रहे हैं। इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की खंडपीठ, जहां तक 1957 में, निसार अली बनाम उत्तर प्रदेश राज्य में, एआईआर 1957 एससी 366 में इस बिंदु पर निम्नांकित अभिनिर्धारण किया गया:

"9, यह अगली दलील थी कि गवाहों ने गलत तरीके से क़ुदरत उल्ला को फंसाया था और इस वजह से अदालत को अपीलार्थी के खिलाफ भी इन गवाहों की गवाही को खारिज कर देना चाहिए था।

अपीलार्थी द्वारा सर्वविदित सिद्धान्त एक में झूठे, सर्वव्यापी में झूठे पर भरोसा किया गया। तर्क यह था कि चूंकि गवाहों ने कुद्रत उल्ला के खिलाफ भी यह कहते हुए बयान दिया था कि उसने अपीलार्थी को चाकू सौंप दिया था, अवर न्यायालय द्वारा इसको उसके खिलाफ होने पर विश्वास नहीं किया था, उच्च न्यायालय को अपीलार्थी को दोषी ठहराने के लिए इन गवाहों के साक्षय को स्वीकार नहीं करना चाहिए था। इस सिद्धान्त को भारत में विभिन्न न्यायालयों में सामान्य स्वीकृति नहीं मिली है और न ही यह सिद्धान्त कानूनी नियम का दर्जा हासिल कर पाया है। यह केवल सावधानी का नियम है। इसका मतलब बस इतना है कि ऐसे मामलों में गवाही की अवहेलना की जा सकती है और यह नहीं कि इसकी अवहेलना की ही जानी चाहिए। एक अमेरिकी लेखक ने कहा है: " सिद्धान्त अपने आप में बेकार है, पहला वैधता के बिंदु पर... और दूसरा, उपयोगिता के बिंदु में क्योंकि यह केवल जूरी को बताता है कि वे किसी भी घटना में क्या कर सकते हैं, न कि उन्हें क्या करना चाहिए या नहीं करना चाहिए, और इसलिए, यह शब्दों का अतिशयोक्तिपूर्ण रूप है। यह व्यवहार में भी घातक है.... "[विगमोर आन एवीडेन्स, वॉल्यूम. तृतीय, पैरा 1008]

10. इस सिद्धांत में केवल साक्षय के वजन का प्रश्न निहित है जिसे न्यायालय किसी दी गई परिस्थितियों में लागू कर सकती है लेकिन यह वह नहीं है जिसे "साक्षय का अनिवार्य नियम" कहा जा सकता है।" (जोर दिया गया)
इस सिद्धांत का लगातार इस न्यायालय द्वारा पालन किया गया है, हाल ही में रोहतास बनाम हरियाणा राज्य, (2019) 10 एससीसी 554 में, और कोई पुनरावृत्ति की आवश्यकता नहीं है।

12. विचारण न्यायालय, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, ने सह-अभियुक्तों के संबंध में गवाहों की गवाही पर अविश्वास करने का विशिष्ट कारण दिया है और उन्हें संदेह का लाभ दिया है, जबकि अपीलार्थी की दोषसिद्धि उसके विरूद्ध सबूतों के आधार पर की गई है। हम विचारण न्यायालय के दृष्टिकोण में कोई दुर्बलता नहीं पाते हैं।

13. हम यह भी पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने, आक्षेपित निर्णय में, अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों को ध्यान में रखा और पूरे सबूतों पर विचार किया, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के उद्देश्य से कि यह एक स्वतंत्र लड़ाई थी क्योंकि अपीलार्थी को भी चोटें लगी थीं और यहां तक कि एक शिकायत करने का भी प्रयास किया था। उपरोक्त के आधार पर, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि और अधिरोपित दंड को संशोधित किया ।

इलनगोवन बनाम तमिलनाडु राज्य द्वारा पुलिस निरीक्षक [एनवी रमना, जे.]

14. अपीलार्थी के अधिवक्ता उच्च न्यायालय के निष्कर्षों में किसी भी दुर्बलता को इंगित नहीं कर पाए हैं। इसलिए हम उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय के साथ हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं देखते हैं। हम अपील में कोई योग्यता नहीं पाते हैं और तदनुसार खारिज किया जाता है।

15. अपील को खारिज करने के परिणामस्वरूप, इस न्यायालय द्वारा 19-7-2010 को अपीलार्थी को दी गई जमानत रद्द की जाती है और उसे शेष सजा को भुगतने हेतु संबंधित विचारण न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण करने का निर्देश दिया जाता है, ऐसा करने में विफल होने पर संबंधित पुलिस प्राधिकारी द्वारा उसे हिरासत में ले लिया जाएगा।

कल्पना के. त्रिपाठी अपील खारिज।

Vetted by,

Abhai Srivastav

Additional District & Sessions Judge,

Court No. 3, Sultanpur.